विपश्यना पत्रिका संग्रह

वर्ष १६ से वर्ष १८ (जुलाई १९८६ से जून १९८९ तक)

भाग-६

विपश्यनाचार्य श्री सत्यनारायण गोयन्का

विपश्यना

पत्रिका संग्रह

भाग - ६

वर्ष १६ से वर्ष १८

(जुलाई १९८६ से जून १९८९ तक)

विपश्यनाचार्य श्री सत्यनारायण गोयन्का के लेखों
तथा पत्रिका में प्रकाशित अन्य लेखों का संग्रह

विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी

विषयानुक्रमणिका

विपश्यना पत्रिका संग्रह भाग - ६

(जुलाई १९८६ से जून १९८७ तक)

धर्मचक्र कथा (१) ३
धर्मचक्र कथा (२) ९
धर्मचक्र कथा (३) १५
रोग बनाम विपश्यना २१
संवेदना (८) २६
संवेदना (९) ३०
बर्मी संत ऊ बा खिन –ध्यानशास्त्री गोयन्का के गुरु *(पृथ्वीसिंह गाला)* ... ३४
प्रामाणिक अधिकारी ३५
विपश्यना सेमिनार ३८
(१) पालि साहित्य में ३८
विपश्यना साधना और उसकी व्याख्या ३८
(२) अशोक के अभिलेख एवं विपश्यना ३९
(३) विपश्यना और शिक्षा ४०
(४) विपश्यना और स्वास्थ्य ४१
(५) विपश्यना एवं सामाजिक परिवर्तन ४३
(६) विपश्यना संबंधी सूचनाओं का प्रसारण ४४
मिल गया सही मार्ग *(डॉ. रामनयन सिंह)* ४६
मन की सफाई – विपश्यना पद्धति से *(रणजीत सिंह कूमट)* ५१
बुद्ध और धर्म ५७
मेरे जीवन के सर्वोत्तम दस दिन (*लक्ष्मीचंद केनिया 'चंद'*) ५९

जुलाई १९८७ से जून १९८८ तक

विपश्यना ध्यान साधना (*नृसिंहदेव अरोड़ा*) ६५
मृतक - मंगल ६८
बुद्ध और धर्म (२) ७३

विपश्यना साधना पर सत्संग
– प्रेम व करुणामय श्री सत्यनारायण गोयन्का से भेट-वार्ता
(– पृथ्वीसिंह गाला) ७४
धन्य विपश्यी!.....७७
आदर्श जीवन! आदर्श मृत्यु ७७
विपश्यना-साधना की आवश्यकता (*शरद कुमार साधक*) ८०
क्या होता है मृत्यु के समय ८४
विपश्यना संगोष्ठी - १९८६ (१) ९०
भूमिका.....९०
साधना-विधि.....९१
विपश्यना के स्रोत ९२
विपश्यना और मानवीय संबंध ९२
विपश्यना और समकालीन समाज.....९४
विपश्यना संगोष्ठी - १९८६ (२) ९७
विपश्यना और छात्र.....९७
विपश्यना और राष्ट्रीय एकता.....९८
विपश्यना और स्वास्थ्य १००
विपश्यना संगोष्ठी – १९८६ (३) १०३
विपश्यना से लाभ १०३
विपश्यना पर शोध.....१०६
१. भगवान बुद्ध की मानव जाति को सबसे बड़ी देन १०६
२. वयधम्मा सङ्खारा.....१०६
३. प्रज्ञा.....१०७
विपश्यना संगोष्ठी – १९८६ (४).....१०९
विपश्यना पर शोध.....१०९
४. संवेदनाओं का महत्त्व १०९
५. 'सति' और 'सतिपट्ठान' ११०
६. मेत्ताभावना १११
विदेशों में विपश्यना.....११२
उपसंहार ११३

अध्यापक - संगोष्ठी - १९८७ (१) ११४
इंसानियत का पाठ ११४
मन की सफाई ११५
एक केस-स्टडी ११५
स्वर्ग– खोया, पाया ११७
"जीवन जीने की कला" हाथ लग गई ११८
मानवीय संबंधों में निखार ११९
अंदर का "हिटलर" ११९
आधुनिक शिक्षा-प्रणाली के दोष १२०
अध्यापक संगोष्ठी – १९८७ (२) १२१
दीक्षांत प्रवचन का सार १२१
"धर्म" और "संप्रदाय" १२१
जात-पांत का विष १२२
"धर्म" धारण करें १२३
साँस का काम १२४
विपश्यना १२४
धर्म क्या है ? १२५
"एके साधे सब सधे" १२६
"नई पीढ़ी" का कल्याण हो १२६
बुद्ध और धर्म (३) १२७

जुलाई १९८८ से जून १९८९ तक

बुद्ध और धर्म (४) १३३
धम्मगिरि पर पावस ऋतु १३५
बुद्ध और धर्म (५) १४१
सच्चे तीर्थः विपश्यना केन्द्र (*श्री नृसिंह देव अरोड़ा*) १४४
बुद्ध और धर्म (६) १४६
प्रेरक प्रसंग (६) उपालि नाई १४९
वस्त्राभूषण की गठरी १४९
बुद्ध और धर्म (७) १५३

उद्‌बोधन ·····१६०
दुःख का मूल, दुष्कर्म (*डॉ. ओमप्रकाश*) ·····१६२
निंदा-गुफा (कहानी) (*पुष्पा सावला)*·····१६६
बुद्ध और धर्म (८)·····१६८
हिरन और कौआ (जातक कथा) (*पुष्पा सावला*)·····१७३
निशंक की कृतज्ञता-विभोर सही वंदना ·····१७५
उन्हीं दिनों की एक और घटना.....१७६
भगवान के जीवन काल की एक और घटना १७७
भगवान के जीवन काल की एक और घटना १७८
कृतज्ञता-विभोर सही वंदना (२)·····१८१
भगवान के जीवन काल की एक और घटना १८२
भगवान के ही जीवन काल की एक और घटना १८२
दुःख से मुक्ति (*डा. ओमप्रकाश*) ·····१८३
दो अतियों के बीच·····१८६
इसी संदर्भ में भगवान के जीवनकाल की एक घटना १८६
इसी संदर्भ में बुद्ध के जीवन काल की एक और घटना.....१८८
पहले जानो तब मानो (*पुष्पा सावला*) ·····१९०
धन्य हुई वैशाख पूर्णिमा·····१९३
शाक्य राजवंश और शाक्य राज्यसंवत्·····१९८
बीस वर्ष पूरे हुए·····२०१

रोग बनाम विपश्यना

जीवन एक संघर्ष है। इसमें जन्म से लेकर मरण तक द्वन्द्वों की शृंखला जुड़ी हुई है– सुख-दुःख, लाभ-हानि, शुभ-अशुभ, प्राप्ति-अप्राप्ति, तृप्ति-असंतोष मान-अपमान, सुदिन-दुर्दिन सब ही आते-जाते हैं। इन उतराव-चढ़ावों में द्वन्द्वों से जूझता मानव, सदा चिंता और तनाव की जिंदगी गुजारता है। यह एक कटु सत्य है। इसे नकारा नहीं जा सकता। इसी चिंता और तनाव से मन में बेचैनी रहती है - परिणाम स्वरूप व्यक्ति न तो भली प्रकार कुछ सोच सकता है और न ही कुछ ठीक-ठीक कर ही पाता है। विचारों के ऊहापोह में उलझा रहता है। यह बेचैनी की अवस्था और अधिक तनाव उत्पन्न करती है, जिसके कारण उसके स्वभाव में रूखापन आने लगता है। नींद नहीं आती, भूख कम हो जाती है, काम करने की रुचि नहीं होती; जीवन से ऊबने लगता है। कार्यक्षमता न्यून हो जाती है और मानसिक उथल-पुथल होती रहती है। इससे और भी चिंता होती है और एक विषम चक्र या वात्याचक्र बन जाता है। वह रात को सोने के बदले उठ-उठ कर बेचैनी से फिरता है, सिगरेट पीता है, बार-बार चाय पीता है, चिढ़ता है, अकारण क्रोध करता है। यह सब उसके जीवन की रोजमर्रा की बातें बन जाती हैं।

इस समस्या का मूल कारण खोजें तो ज्ञान होता है - जब-जब व्यक्ति में हीनभावना या विकार उत्पन्न होते हैं तब-तब मन में कुंठा, तनाव और बेचैनी होती है। ऐसी स्थिति क्यों होती है? इसलिए कि जब कोई अवांछित घटना घट जाय या जैसा हम चाहते हैं वैसा न हो या हमारी अपेक्षा के विपरीत कुछ हो जाय या कोई कुछ ऐसा कह दे या कर दे जो हमें पसन्द नहीं तो ऐसा होते ही मन में एक झुंझलाहट-सी पैदा होती है– ऐसा क्यों हुआ, कैसे निवारण हो? आदि चिंताएं होने लगती हैं। और चिंता तो एक भयानक अवस्था है। इसे तो चिता से भी बुरा कहा गया है। चिता तो मृतक के शव को ही जलाती है, पर चिंता जीवित व्यक्ति को खा जाती है। निरंतर चिंता सताती रहे तो धीरे-धीरे अनेक रोग पनपने लगते हैं। पहले छोटे-छोटे साधारण रोग और फिर धीरे-धीरे भयंकर रोग जैसे बढ़ा हुआ रक्तचाप, हृदय-रोग, मधुमेह (डायबिटीज), वृक्क (किडनी) रोग घर कर लेते हैं। कभी-कभी तो मानसिक तनाव इतना बढ़ जाता है कि व्यक्ति मानसिक संतुलन खो बैठता है और विक्षिप्त (पागल) सा हो जाता है। अतः मनीषियों ने ठीक ही कहा है कि सब क्लेशों का मूल, भय, आशंका और तृष्णा ही है। जब तृष्णा पूरी

मिल गया सही मार्ग

– डॉ. रामनयन सिंह

बचपन से ही धर्म की ओर मेरा झुकाव रहा है। मूर्ति-पूजा से यात्रा आरंभ हुई। चौदह-पन्द्रह वर्ष की अवस्था से रामायण और गीता का पठन-पाठन करने लगा। विज्ञान का विद्यार्थी था। इस मूर्ति-पूजा और इन सद्ग्रंथों के अध्ययन ने विश्वास जमाया नहीं, डिगाया ही। विज्ञान से स्नातक डिग्री उपलब्ध हो जाने के बाद परिस्थितिवश संस्थागत अध्ययन छोड़ कर आजीविका हेतु अध्यापन कार्य में संलग्न होना पड़ा। मन को समझने की जिज्ञासा ने मुझे मनोविज्ञान की ओर मोड़ा। मनोविज्ञान से एम.ए. करने के बाद पी-एच. डी. की डिग्री हासिल की। यह सब अध्यापन करते हुए किया। सन् १९६० से ही स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजीपुर (उ. प्र.) में मनोविज्ञान के अध्यापन, कुछ शोध कार्य और लेखन में संलग्न रहते हुए मन को समझने की पूरी लगन के साथ प्रयास चल रहा है। मानसिक स्वास्थ के क्षेत्र में विशेष रुचि बन गई है। लेकिन जो कुछ पढ़ा (और यथासंभव खूब पढ़ा, लगन के साथ) उससे खोजी मन को तृप्ति नहीं मिली। वर्तमान मनोविज्ञान 'मेकेनिकल', सतह-स्पर्शी और परस्पर-विरोधी सिद्धांतों से भरपूर लगा। 'डेप्थ' मनोविज्ञान में भी संतोषजनक गहराई का बोध न हो सका। पिटी-पिटाई धर्म और दर्शन की पुस्तकें आकर्षित तो करती हैं, लेकिन पढ़ने पर अंत में अतृप्ति और ऊब ही मिलती है। इस बीच कई धर्मगुरुओं के संपर्क में भी गया। उनके बताये मार्ग पर पूरी निष्ठा के साथ चला भी। उससे भी अतृप्ति में परिवर्तन नहीं हो पाया। वैज्ञानिक मानसिकता के कारण कुछ जम नहीं पाया। कुछ ध्यान का अभ्यास भी चलता रहा। लेकिन अस्तित्व की गहराई से प्यास गई नहीं।

कोई दस वर्ष पूर्व विपश्यना साधना पद्धति की भनक मिली। पूज्य ऊ बा खिन के प्रवचनों की एक लघु पुस्तिका पढ़ने को मिली। मन आकर्षित हुआ, सूचनाएं भी मिलीं लेकिन संयोग बना नहीं। स्वामी विज्ञान भिक्षु से विपश्यना साधना पद्धति का पूरा परिचय मिला और उसमें सम्मिलित होने की सत्प्रेरणा मिलने लगी। उन्ही के प्रयास से साधना में प्रवेश का प्रथम अवसर मिला। राजगृह में १९८५ के एक से दस दिसंबर तक चले विपश्यना साधना शिविर में सम्मिलित हुआ। सहायक आचार्य पूज्य लक्ष्मीनारायणजी राठी शिविर के संचालक थे।

बुद्ध और धर्म

जब कोई व्यक्ति सम्यक संबुद्ध बनता है, चाहे सिद्धार्थ गौतम हो अथवा कोई और, तो वह कदापि कोई संप्रदाय स्थापित नहीं करता। शुद्ध धर्म ही लोगों को सिखाता है। शुद्ध धर्म याने कुदरत का वह कानून जो सब पर एक जैसा लागू होता है, जो किसी का पक्षपात नहीं करता। विश्व में कोई बुद्ध बने या न बने, यह कानून सदैव अपना काम करते रहता है। पर जब कोई व्यक्ति बुद्ध बन जाता है तो स्वानुभूति से इस कानून की बारीकियों को जान लेता है और दुखियारी जनता, जो इसे भूल बैठी थी, उसे समझाता है। धर्म धारण करने की प्रेरणा देता है और उपाय बताता है। कालांतर में लोग अनुभूतियों से समझ में आने वाली इन बारीकियों को खो बैठते हैं और उस शिक्षा को महज भावावेश या बुद्धिविलास का विषय बना लेते हैं। तब इसी से भिन्न-भिन्न संप्रदायों का प्रजनन और संगठन होने लगता है।

भगवान गौतम बुद्ध के जीवनकाल की एक घटना।

उन दिनों जानुश्रोणी नाम का एक अत्यंत धनवान ब्राह्मण श्रावस्ती में रहता था। लगता है लोगों पर अपने धनवान होने की छाप डालने के लिए वह कभी-कभी अपने वैभव का प्रदर्शन किया करता था। एक बार वह अत्यंत मूल्यवान और चित्ताकर्षक रथ पर सवार होकर नगर में से गुजरा। लोगों ने देखा उसके रथ में दो उजले सफेद घोड़े जुते हैं। रथ भी उजला सफेद और उसके सारे साज भी उजले सफेद। लगाम, चाबुक, चंदवा, गादी सभी उजले सफेद। और स्वयं जानुश्रोणी भी उजले सफेद वस्त्र और उजले सफेद जूते पहने था। उस पर उजले सफेद चँवर डुलाए जा रहे थे।

यह दृश्य देखकर लोग कहने लगे, "कितना सुंदर रथ है मानो ब्रह्मयान ही धरती पर उतर आया हो!"

भिक्षाटन के लिए गए भिक्षु आनंद ने यह सब देखा, सुना तो गोचरी से लौटने पर, जेतवन पहुँचकर उसने भगवान बुद्ध से पूछा, "भंते भगवान! बुद्धों की धर्म-शिक्षा में ब्रह्मयान की क्या व्याख्या है?"

भगवान ने कहा, "यह जो आर्य अष्टांगिक मार्ग है, यही ब्रह्मयान है, यही धर्मयान है, यही सर्वोत्तम संग्राम विजय है।"